SAMVAD E-JOURNAL
ISSN (Online) :2583-8334
(International Peer-Reviewed Refereed Journal)
Volume 3, Issue-3, April-May-June : 2025
Published by Rangmati Publication https://www.rangmatipublication.com/

उषा प्रियवंदा के उपन्यासों में नारी विमर्श

डॉ नारायण बागुल

लेखन के क्षेत्र में नारी का पदार्पण भले ही बाद में हुआ किंतु उसकी सृजनात्मकता अत्यंत प्राचीन है, जब वह साक्षर नहीं थी तब मौखिक रूप से उसकी रचनाएं पीढी दर पीढ़ी चलती थी। 50 के दशक से पहले नई लेखन के जो प्रमाण मिलते हैं यकीनन वह आज के नारी विमर्श की आरंभिक कड़ियां हैं, इसे निस्संदेह स्वीकार किया जा सकता है। नारी विमर्श एक ही विचारधारा को लेकर चलने वाला विमर्श न होकर अनेक विचारों को लेकर चलने वाला विमर्श है, नारी विमर्श किसी एक ही नारी समाज या वर्ग को ही भाव भूमि प्रदान नहीं करता बल्कि समग्र नारी समाज को नई चेतना देता है,नारी विमर्श उस साहित्यिक आंदोलन को कहा जाता है जिसमें नारी अस्मिता को केंद्र में रखकर संगठित रुप से नारी साहित्य की रचना की गई । नारी विमर्श को अंग्रेजी में 'फेमिनिज्म' कहा गया है । नारी अस्मिता के संदर्भ में किया गया विचार नारी विमर्श कहलाता है। हिंदी साहित्य में नारी विमर्श अन्य अस्मितामूलक विमर्शों की तरह ही विमर्श रहा है । नारी विमर्श से संबंधित अनेक विद्वानों ने अपने मत व तर्क़ दिये है जो इस प्रकार है –नासिरा शर्मा के अनुसार – "नारी को समानता, स्वतंत्रता एवं समाज में महत्व दिलाने केलिए किया गया चिंतन नारी विमर्श के अंतर्गत आता है । "रामचंद्र तिवारी के शब्दों में – " नारी के हकमें उसे शोषण, अन्याय और उत्पीड़न से मुक्ति देने, उसका महत्व स्वीकार करने से संबंधित चिंतन ही नारी विमर्श है। "अज्ञेय ने कहा है कि – "नारी समस्याओं एवं उसकी अस्मिता के बारे में की गई चर्चाएं ही नारी विमर्श है।"

दार्शनिकों का मानना है कि किसी भी समाज की प्रगति उस समाज की नारी की प्रगति से जोड़कर देखी जाती है, लेकिन समग्र भारत में नारी वर्तमान समय में भी अपनी अस्मिता की लड़ाई लड़ रही है। उसकी स्वयं की कोई पहचान नहीं है, पुरुष के साथ जुड़कर उसे पहचान मिली है। नारी ने सती प्रथा, देवदासी प्रथा, कन्या भ्रूण हत्या, बालिका विवाह, दहेज प्रथा, घरेलू हिंसा और न जाने कितने ही दमनकारी सामाजिक कुरीतियों को सहा है । इन सभी परिस्थितियों से प्रतिकार करती हुई उसने अपनी अस्मिता को बरकरार रखते हुए समाज में अपनी प्रतिष कायम की है। भारतीय नारी विमर्श आंदोलन ने समाज में महिलाओं की स्थिति को सुधारने और उनके अधिकारों के लिए संघर्ष किया। इन आंदोलनों ने महिलाओं को जागरूक किया और उन्हें समाज में समानता, शिक्षा, सुरक्षा, और अधिकारों के लिए लड़ने का एक मंच प्रदान किया।इन आंदोलनों का असर आज भी महसूस होता है और महिलाएं अब अपने अधिकारों की रक्षा के लिए अधिक सशक्त और जागरूक हो रही है। उन्नीसवीं शताब्दी में भारतीय समाज में नारी की शिक्षा के लिए ईश्वर चंद्र विद्यासागर, राजा राममोहन राय, स्वामी विवेकानंद आदि लोग सामने आए जिन्होंने नारी शिक्षा को आगे बढ़ाया तथा अनेक नये स्कूलों की स्थापना की।

डॉ नारायण बागुल, अध्यक्ष, हिंदी विभाग, वसंतराव नाईक महाविद्यालय, मुरुड जंजीरा जिस रायगढ़ 402401, narayanbagul.1968@जीमेल.com, Mob.9421332102

ईश्वर चंद्र विद्यासागर के प्रयास के परिणाम स्वरुप बालविवाह जैसी कुप्रथा को समाप्त कियागया तथा सन 1860 में बाल विवाह रोकने के लिए कानून बना।

हिंदी कथा साहित्य में नारी विमर्श एक ऐसा क्षेत्र है जिसने सदियों से साहित्यकारों और पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है। यह विमर्श नारी के जीवन अनुभवों, संघर्षों और समाज में उसकी भूमिका को केंद्र में रखकर किया जाता है। यह तो सिर्फ एक साहित्यिक विषय नहीं है बल्कि यह समाज में नारी की स्थिति और उसके अधिकारों से जुड़ा हुआ एक महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दा भी है। हिंदी साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में नारी मुक्ति की अवधारणा को ध्यान में रखकर जो विचार व्यक्त किए हैं वह नारी विमर्श के अंतर्गत आते हैं। इन्होंने नारी कीस्थिति दर्शाने केप्रयास अपनेसाहित्य में किये है।विशेष रूप से कुछ लेखिकाओं ने इस दिशा में विशेष प्रयास किए हैं। आठवें दशक में महिला लेखिकाओं ने इसी विमर्श को अपनी रचनाओं में अधिक उभारने का प्रयास किया। पुरुष लेखकों ने भी नारी कीदशा का चित्रण अपनी रचनाओं में किया है। प्रेमचंद, सुरेंद्र वर्मा, भीष्म सहानी, विष्णु प्रभाकर, रामदरशमिश्र आदि लेखकों ने नारी के प्रति होने वाले अन्याय, अत्याचार का मुखर विरोध किया है। उन्होंने आधुनिक नारी को घर की चार दीवारी से बाहर निकालकर कर्म क्षेत्र में लाकर खड़ा कर दिया है। यहां परिस्थितियों का दबाव भी है और मुक्ति का उल्लास भी। उन्होंने अपनी रचनाओं में नारी जीवन के लगभग हर पहलू को छुआ है साथ ही एक अलग परिपेक्ष में नारी के व्यक्तित्व को उभरने की कोशिश कीहै। उनकी दृष्टि से नारी के सामने अनेक चुनौतियां हैं जिनसे लड़ना ही वह अपने जीवन की सार्थकता समझती है तथा अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व की पहचान कराती है। नारी विमर्श की अभिव्यक्ति का मूल स्वर नारियों की आर्थिक आत्मनिर्भरता एवं नारी पुरुष की समानता के इर्द-गिर्द घूमता रहता है। नारी-पुरुष के लिए समाज ने जो अलग-अलग प्रतिमान निर्धारित कर रखे हैं उनका मुख्य विरोध भी हिंदी साहित्य में हुआ है। नारी को मात्र भोग विलास की वस्तु समझने वाली मानसिकता का विरोध भी मुखर रूप में किया गया है। समाज में बेटे बेटी में जो फर्क किया जाता है वह भी नारी को कचोटा है। आज की नारियों में आत्माभिमान है, वे अपनी स्थिति को सुधारने के लिए प्रारूपण से जुटी हुई है। अब वह जमाना चला गया जब स्त्रियों को गाय भैंस की तरह चाहे जिस खूंटे से बांध दो, वेउफ तक न करती थी।

नारी विमर्श के अंतर्गत कुछ महिला कथाकारों ने ऐसी नारियों का चित्रण भी किया है जो आर्थिक रूप से स्वतंत्र एवं स्वावलंबी होकर विवाह संस्था का विरोध करती है और पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर रहना चाहती है, पत्नी बनकर नहीं। हिंदी कथा साहित्य में नारी विमर्श एक ऐसा विषय है जो हमेशा प्रासंगिक रहेगा। यह न केवल साहित्य के लिए बल्कि समाज के लिए भी महत्वपूर्ण है। नारी विमर्श के माध्यम से इन कथाकारों ने नारीजीवन को बेहतर ढंग से समझा और समाज में समानता लाने के लिए प्रयास भीकिया। नारी विमर्श से संबंधित रचनाकारों में उषा प्रियंवदा, मंजुलाभगत, ममता कालिया, मन्नू भंडारी, प्रभा खेतान, चित्रा चतुर्वेदी, नासिरा शर्मा, अलका सरावगी, सूर्यबाला, कुसुम कुमार, चंद्रकांता, चित्रामुद्गल, राजी सेठ, कृष्णा सोबती, मृदुला सिंह, सुरेंद्र वर्मा, रामदरश मिश्र, मैत्रेयीपुष्पा आदि उल्लेखनीय है जिन्होंने नारी केलिए समानता का अधिकार, शिक्षा और सशक्तिकरण, स्वास्थ्य और सुरक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता, कानूनी अधिकारों का संरक्षण करना आदि मुद्दों परप्रकाश डालते हुए नारी कोपुरुष के बराबरी का स्थान दिया। महिलाओं के खिलाफ हो रहे सामाजिक भेदभाव, उत्पीड़न और अहिंसा को समाप्त कर इन्होंने नारी को समाज में सम्मान प्रदान किया। नारी विमर्श का महत्व समाज के विकास और समानता की दिशा में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कदम है। यह विचारधारा नारी के अधिकारों, उनके सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थिति में सुधार की दिशा में काम करती है। नारी सशक्तिकरण के जो भी प्रश्न समझ में

प्रकट हो रहे हैं, साहित्य कौन से निरपेक्ष नहीं रह सकता। हर काल में नारी के बालीकरण के प्रश्न बदलते रहे हैं। आज नारीलिंग भेद, महिलाओं पर हिंसा को रोकना, निजी कानूनों में संशोधन, महिला स्वास्थ्य तथा आर्थिक दशा आदि मुद्दों से जूझ रही है। नारी को समाज की अग्रगामी धारा से जोड़ने में महिला कथाकारों ने प्रमुख भूमिका निभाई है ।

उषा प्रियवंदा समकालीन हिंदी उपन्यासों के प्रमुख हस्ताक्षरों में से एक है।परिवार और समाज की विसंगतियां तथा विडंबनाओ का इन्होंने जितनी सूक्ष्मता से चित्रित किया है उतनी ही व्यापकता से व्यक्ति के बाह्य और आंतरिक संसार के बीच संबंधों को भी को उकेरा है। उनकी रचनाओं में एक ओर आधुनिकता का प्रबल स्वर मिलता है, तो दूसरी ओर उसमें चित्रित संवेदनाओं को हरवर्ग का पाठक एकरुपता का अनुभव करता है। उषा प्रियंवदा उन रचनाकारों में से एक है जिन्होंने आधुनिक जीवन की छटपटाहट, संत्रास और अकेलेपन की अनुभूति को अपनी रचनाओं में व्यक्त किया है। उनके कथासाहित्य में आधुनिक परिवेश में विकसित नारी काचित्रण है। स्वतंत्रता के बाद जो परिवर्तन नारी जीवन में आए, सूक्ष्मता से अंकन हुआ है। उषा प्रियंवदा के उपन्यासों में नारी विमर्श के तौर पर नारी की स्वतंत्रता शोषण और समाज में रहने की चुनौतियों का चित्रण मिलता है। उनके उपन्यासों में नारी जीवन की त्रासदी स्थितियों का बयान है। नारी मनकी लालसाओं, कामनाओं, निराशाओं और अपेक्षाओं का मार्मिक चित्रण करते हुए नारी जीवन के कई अनुछुए पहलुओं को प्रकाश में लाने का प्रयास उन्होंने किया है। नारी की स्वतंत्रता और उसके सशक्तिकरण की एक जमीन तैयार करना, समाज में रहने वाली महिलाओं की प्रतिष्ठा को दर्शाना, आधुनिक जीवन की छटपटाहट तथा अकेलेपन की स्थिति को व्यक्त करना तथा नारी की प्रथा को बहुत सहज व सजग तरीके से प्रस्तुत करके उसकी क्षमताओं का परिचय संघर्षशीलता से दिलाना उषा प्रियंवदा के उपन्यासों का लक्ष्य रहा है।

उषा प्रियंवदा के प्रमुख उपन्यासों में'पचपन खंबे लाल दीवारें', 'रुकोगी नहीं राधिका', 'शेष यात्रा', 'भया कबीरा उदास', ' नदी ', 'अंतर्वशी' आदि उल्लेखनीय है इन उपन्यासों की अधिकांश कथाओं में आधुनिक नारियों के जीवन की झांकियां विकसित हुई है उनके उपन्यास मुख्यतः नारी विमर्श केंद्रित और नारी प्रधान है। नारी के दुख दर्द, जीवन संघर्ष तथा घुटन के साथ-साथउसका शिक्षित होना, नौकरी करना, परिवार का भरण पोषण करना और आत्म सम्मान को बनाए रखने के लिए अत्याचार के प्रति विद्रोह करना नारीपात्र उषा प्रियंवदा के नारी विमर्श को उजागर करने में अत्यधिक सफल बन पड़े हैं । इस तरह उषा प्रियंवदा ने नारी जीवन के परिपेक्ष में आधुनिक जीवन की गतिविधियों का चित्रण अपने उपन्यासों में किया है। 'पचपन खंभे लाल दीवारें(1961), उषा प्रियवंदा का पहला उपन्यास है जिसमें उन्हों ने सुषमा जैसे पात्र के माध्यम से आधुनिक भारतीय नारी की छटपटाहट, संत्रास और अकेलेपन की स्थिति में नारी की सामाजिक, आर्थिक विवशताओं से उत्पन्न मानसिक स्थिति का बड़ा ही मार्मिक चित्र छात्रावास के पचपन खंबे और लाल दीवारों के बीच सुषमा की चटपटाहटके माध्यम से उद्घाटित किया है। सुषमा नारी मनकी पीड़ा अपने समझौते और त्याग के कारण इस अकेलेपन की भोक्ता रही है तथा अपने मनके निजी एकांत कोने में कुछ सपनों की अवशिष्ट यादों केलिए नितांत अकेली है मगर उसका सामाजिक जीवन कर्तव्यबद्ध है। सुषमा की मनस्थ का विश्लेषण करते हुए लेखिका लिखती है कि–"अपने दायित्वों, पद की गरिमा और परिवार की दीवारों में उसके जीवन के सुनहरे वर्ष विलीन हो गए थे परंतु इसे गिरे होने पर भी अवचेतनों उसे हमेशा सालता रहता है। उसे प्रेमी नहीं चाहिए था, उसे पति की आकांक्षा नथी, पर कभी-कभी न जाने क्यों उसकी मां डूबने लगता। अपने परिवार का सारा बोझ अपने ऊपर लिए, वह कांपने लगती। तब वह चाह उठती कि दो बाहें उसे भी सहारा देने

को हो। "सुषमा के व्यक्तित्व में मनोवैज्ञानिक तत्व उभरकर सामने आया है, उसमें जिजीविषा कूट-कूट कर भरी हुई है तथ अपने अस्तित्व से उसे लगाव है। सुषमा के माध्यम से लेखिका ने इस बात की पुष्टि की है कि आज की नारी स्वतंत्रता है और वह पुरुष को दोष देने के पक्ष में नहीं है उसने अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व प्राप्त किया है तथा वह सम्मान जनक शर्तों पर रहना चाहती है।

'रुकोगी नहीं राधिका'(1967)उषा प्रियंवदा का चरित्र उपन्यास है, जिसकी नायिका राधिका के माध्यम से बदलते हुए सामाजिक परिवेश को चित्रित किया गया है । विमाता के आगमन से परिवार में उसका दम घुटता है अतः वह अपने अस्तित्व एवं स्वतंत्रता का बोध कराती हुई अपने पिता से कहती है, "जो आप चाहते हैं, वही हमेशा क्यों ? क्या मेरी इच्छा कुछ भी नहीं है । मैं आपकी बेटी हूं, यह ठीक है पर अब मैं बड़ी हो चुकी हूं और जो मैं चाहूंगी वही करूंगी। "राधिका परंपरा के भंवरमें फंसी भारतीय नारी है, जो शिक्षित और आत्म निर्भर तो हो गई है पर अपने रिश्तों से मुक्त नहीं हो पाई है। राधिका में स्वतंत्रता बोधपर्याप्त मात्रा में है अतः पिता के आग्रह को ठुकराती हुई ठुकरा वह अलग होती है ।'शेषयात्रा'(1984) उषा प्रियंवदा का उल्लेखनीय उपन्यास है जिसमें उन्होंने भारतीय परिवेश से निकलकर अमेरिका की अत्याधुनिक जीवन शैली को अपनाती एक ऐसीनारी की कथा प्रस्तुत की है जो कई स्तरों पर द्वंद में घिरी हुई है। तब वह पाती है कि जीवन का अर्थ अपने मूल में न कि प्रचलन भरी सभ्यता में है। इस उपन्यास की नायिका अनु पारिवारिक और सामाजिक रूप से शोषण की शिकार तो है ही इस के साथ ही उसे संत्रास और अकेलेपन ने घेर रखा है। अनु एक विवेक संपन्न और संवेदनशील नारी है, वह जो चाहती है कर नहीं सकती और जो नहीं चाहती हैकरती चली जाती है, यही उसके जीवन की विडंबना है। अनु इस उपन्यास में अपने मनकी कोमलता के बावजूद जागते स्वाभिमान और कठोर जीवन संघर्ष का प्रतीक है।

'भया कबीर उदास'(2007) उपन्यास मेंउषा प्रियवंदा का 21 वीं सदी के प्रथम दशक का चर्चित उपन्यास रहा है। उषा प्रियंवदा एक नारी के द्वारा वैश्विक विकलांग जीवन परप्रकाश डालते हुए नारी के प्रति संवेदना प्रकट की है तथा अभिजात वर्ग की युवती लिली पांडेय की अकेलेपन की त्रासदी तथा कैंसर जैसे भयानक बिमारी से पीड़ित मनस्थिति का हृदय स्पर्शी चित्रण किया है। उपन्यास की नायिका लिली अपने मां बाप की इकलौती संतान है जो शोधकार्य हेतु विदेश जाती है। अपनी बिमारी की जांच के बाद जब उसे ज्ञात होता है कि उसे स्तन कैंसर है और इसके इलाज के बाद शरीर का सबसे प्रिय अंग से वंचित होना पडेगा। अपूर्ण शरीर होने के बाद भी लिली जीवन से अपना अधिकार लेती है। 'नदी'(2013) नारी विमर्श की दृष्टि से एक चर्चित उपन्यास है जिस में नारी जीवन की रिक्तता, अकेलेपन, उदासीनता , व्यर्थ की सामाजिक रुढियों से मुक्ति की आकांक्षा आदि का अंकन किया गया है।साथ ही स्त्रीपुरुष के बदलते संबंधों तथा उनसे उपजने वाली मानसिक अंत र्द्वंद्व का चित्रण करते हुए नई स्वाधीनता के अनेक प्रश्नों को उठाने का प्रयास लेखिका ने अपने उपन्यास के माध्यम से किया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि उषा प्रियवंदा ने नारी जीवन के परिपेक्ष में आधुनिक जीवन के विभिन्न गतिविधियों का सजीव चित्रण अपने उपन्यास में किया है। उन्होंने नारी जीवन की विसंगतियों, नई परिस्थितियों तथा उलझन पूर्ण मनस्थितियों को उजागर किया है । समकालीन नारी की बदलती हुई मान्यताओं विश्वासों और परिस्थितियों के बदलाव को लेखिका ने अपनी कलम का आधार बनाया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि उष प्रियवंदा के कथा साहित्य में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक सांस्कृतिक सभी प्रकार के संघर्षों को स्थान मिला है परंतु प्रधानता नारी विमर्श की है जिस का उद्देश्य सभ्य समाज का निर्माण करना है तथा नारी को पुरुष के समकक्ष सम्मान का स्थान दिलाना भी है।

संदर्भ

1 स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास –आरसुरेंद्रन

2 स्वतंत्र्योत्तरहिंदी उपन्यास साहित्य की समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि..डॉ स्वर्णलता

3 हिंदी उपन्यासों में समाजपरिवर्तन –डॉ शेखरब्बानी

4 औरत के लिए औरत. .नासिरा शर्मा

5 हिंदी उपन्यासः सामाजिक चेतना... डॉ कुंवरपाल सिंह

6 नारीवादी विमर्श.... कुमार राकेश